Vol 6 Issue 12 Jan 2017

ISSN No : 2230-7850

International Multidisciplinary Research Journal

Indian Streams Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-Chief
H.N.Jagtap

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2230-7850**

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Regional Editor

Dr. T. Manichander

Mr. Dikonda Govardhan Krushanahari
Professor and Researcher ,
Rayat shikshan sanstha's, Rajarshi Chhatrapati Shahu College, Kolhapur.

International Advisory Board

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

.....More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.org

INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL

ISSN: 2230-7850
IMPACT FACTOR : 4.1625(UIF)
VOLUME - 6 | ISSUE - 12 | JANUARY - 2017

प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्ध में षाड्गुण्यमंत्र (मूलमंत्र) की उपयोगिता – वर्तमान सन्दर्भ में

महेश कुमार रचियता
व्याख्याता – राजनीतिक विज्ञान ,
डॉ. बी.आर.ए. राज. महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

प्रस्तावना–

प्राचीन भारतीय रातशास्त्रियों ने राज्य का षाड्गुण्यमंत्र को मूलमंत्र माना है। मनु ने यह मंत्र छः प्रकार का बलताया है। इसीलिये इसे षाड्यगुण्यमंत्र कहते हैं। प्राचीन भारत के प्रायः सभी आचार्यो ने यह मंत्र छः प्रकार का बतलाया है। महाभारत में षाड्गुण्यमंत्र का गुणगान किया गया है। शांतिपर्व में भीष्म राजा युधिष्ठिर को उपदेश देते हुये बताते हैं कि षाड्गुण्यमंत्र त्रिवर्ग तथा परमत्रिवर्ग को राजा जान लेता है, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वी का भोग करता है। कौटिल्य एवं शुक्र ने भी मंत्र को षाड्गुण्यमंत्र माना है। इस प्रकार मनु के षाड्गुण्यमंत्र का अनुमोदन परम्परागत आधार पर प्राचीन भारतीय राजशास्त्र प्रमुख आचार्यो ने ज्यों का त्यों उसी रूप में किया हैं धर्म शास्त्रकारों ने षाड्गुण्यमंत्र के छः गुणों को संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैवीभाव और संश्रय के नामों से सम्बोधित किया है। इस संदर्भ में मनु का कथन है कि उपर्युक्त उपायों को प्रयोग में लाते समय राजा को संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय इन छः गुणों का सर्वदा चिन्तन करना चाहिए। महाभारतकार ने भी इन गुणों का वर्णन किया है। कौटिल्य कतिपय आचार्यो का मत देते हुए बतलाते हैं कि आचार्यो के मतानुसार संधि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय और द्वैधीभाव छः गुण षाड्गुण्यमंत्र के होते हैं। आचार्य वातव्याधि का मत है कि गुण केवल दो ही होते हैं। संधि और विग्रह में ही समस्त चार गुणों का अन्तर्भाव निहित है। परन्तु कौटिल्य आचार्य वातव्याधि के इस मत से सहमत नहीं है। वह संधि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय और द्वैधीभाव इन छः गुणों को मानते हैं। शुक्र ने भी छः गुणों को माना है। इन गुणों में से किस समय किस गुण का आश्रय लेना चाहिए, इस सन्दर्भ में मानवधर्मशास्त्रकार भी व्यवस्था इस प्रकार है – आसन, यान, संधि, विग्रह, द्वैध और संश्रय इन गणों में से अवसरानुसार हानि–लाभ को देखकर जब जिस गुण की आवश्यकता हो उसका आश्रय लेना चाहिये।

महेश कुमार रचियता

1.संधि –

मानवधर्मशास्त्रकार ने संधि की परिभाषा नहीं की है, किन्तु इसके रूपों का विवेचन परिस्थितियों का उल्लेख किया है। जिनमें संधि गुण का आश्रय लेना होता है। मनु इस विषय में प्रायः मौन हैं। फिर भी उन्होंने यह बताया है कि राजा को कार्य देखकर इनको प्रयोग में लाना चाहिये। साथ ही कुछ परिस्थितियों का संकेत भी उन्होंने किया है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में संधि की परिभाषा इस प्रकार की है – प्रण के आधार पर दो राजाओं में जो परस्पर बन्धन हो जाता है, संधि कहलाता है। शुक्र ने संधि की परिभाषा इस प्रकार की है – जिस क्रिया के द्वारा बलवान शत्रु राजा मित्र बन जाय वह क्रिया संधि कहलाती है। सोमदेवसूरि ने संधि की परिभाषा में कौटिल्य के शब्दों का अनुसरण किया है। कौटिल्य ने शमः समाधि, संधि, तीन पर्यायवाची नाम संधि के बताये हैं। अन्यत्र कौटिल्य ने संधि शब्द की व्याख्या में लिखा है – राज्ञं विश्वासोपगमः संधि। इसका तात्पर्य यह होता है कि संधि करने दोनों राष्ट्र परस्पर का हित साधन करने में एक दूसरे की सहायता करेंगे ही ऐसा निश्चय कर ले। इस प्रकार संधि की परिभाषा में परस्पर सहायता और विश्वास को महत्व प्रदान किया जाता है, जो मित्रता के आवश्यक तत्व होते हैं। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे – विकासशील राष्ट्रों (दुर्बल राजा) के द्वारा विकसित राष्ट्रों (बलवान राजा) के साथ संधि करना समझौता करना आदि। मानवधर्मशास्त्रकार ने संधि के दो भेद बताये हैं –

1.समानयानकर्मा संधि –

इस विषय में मनु का आशय स्पष्ट नहीं है। किन्तु इसमें प्रयुक्त यान शब्द के माध्यम से इसे इस प्रकार कहा जा सकता है – तात्कालिक या भविष्य के लाभ की इच्छा से किसी दूसरे राजा से मिलकर शत्रु पा पर एक साथ आक्रमण कर देना समानयानकर्मा संधि है।

2. असमानयानकर्मा संधि –

समानयानकर्मा संधि के विपरीत जब उक्त उद्देश्य से दो राता परस्पर संधि करते हैं। कि एक मित्र राजा को एक ओर और दूसरे को दूरी ओर वाले शत्रु पर आक्रमण करना है तो इस प्रकार की संधि असमानयानकर्मा संधि मानी जाती है।

संधि की परिस्थितियाँ –

शुक्र ने संधि किन परिस्थितियों में की जानी चाहिये इस विषय पर अपना मत प्रकट किया है। वह संधि के महत्व का वर्णन करते हुये कहते है कि राजाओं को चाहिये कि वह युद्ध से सदैव बचते रहें। जब युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय रह ही न जाये, तब विवश होकर युद्ध करना चाहिये। बलवान के साथ युद्ध करना चाहिये, इसका तो कोई उदाहरण ही नहीं है। प्रचण्ड वायु की ओर कभी मेघ जाता हुआ नहीं देखा गया हैं संधि तो अनार्य राजा से भी कर लेनी चाहिये। जब संधि हो जाती है और कांटों से घिर जाता है तो उसे कोइ काट नहीं सकता है। जिस प्रकार संघातकारी कांटों से युक्त बॉस कभी काटा नहीं जा सकता उसी प्रकार अनार्य राजा से भी मिल जाने पर अन्य शत्रु राजा को उखाड़ नहीं पाते। जब किसी राजा पर बलवान शत्रु आक्रमण कर दे और उस समय कोई अन्य उपाय दिखलायी न पड़े तो विवादग्रस्त राजा को अपने शत्रु से संधि कर लेनी चाहिये और शत्रु के विपरीत समय की प्रतीक्षा करते रहना चाहिये। संधि कर लेना ही शत्रु के लिये एक भेंट मानी गई है। समय पर संधि पर लेना चाहिये ऐसा शुक्र का मत है। शुक्र ने इस विषय का भी उल्लेख किया है कि जब एक सबल राजा निर्बल राजा पर आक्रमण कर देता हे और वह निर्मल राजा इस प्रकार संकट में पड़कर कन्या, भूमि, अथवा धन का उपहार उस सबल राजा को देकर संधि करने पर विवश हो जाता है और संधि कर लेता है, तो इस प्रकार की संधि स्थायी रहे यह सर्वांश सत्य नहीं है। राजा को सदैव सचेत और सचेष्ट रहना चाहिये क्योंकि विवश होकर की गई संधि वास्तविक संधि नहीं होती। ऐसी संधि केवल समय टालने के लिये की जाती है। इस विषय में शुक्र का कथन है कि जो बुद्धिमान राजा होता है वह संधि कर लेने पर विश्वास नहीं करता है। इन्द्र ने वृत्तासुर से वैर न करने की संधि करके भी उसे मार गिराया था। यह पूर्वकालीन कथा प्रसिद्ध है। इस प्रकार शुक्र समयानुसार संधि करने पर विश्वास करते हैं। इस प्रकार शुक्र ने विशेष चातुर्यपूर्ण ढंग से मनु के विचारों का ही अनुमोदन किया है और संधि के पश्चात भी शत्रु से सजग रहने की सलाह दी है। कामन्दक ने भी उस परिस्थिति का वर्णन किया है जिसके वशीभूत होकर राजा को संधि करनी पड़ती है। कामन्दक का कथन हे कि जब राजा किसी दूसरे बलवान शत्रु राजा से आक्रान्त हो जाये और अपनी रक्षा का कोई उपाय न दिखलायी पड़े तो ऐसी अवस्था में विपदस्त राजा को समय व्यतीत करने के लिये संधि कर लेनी चाहिये। कामन्दक की उक्ति है कि संधि गुण के विशेषज्ञों संधि के सोलह प्रकार बताये हैं। इसमें उपहार संधि को वह सब संधियों में श्रेष्ठ मानते हैं। उनका मत है कि आक्रमक करने वाला वली शत्रु बिना लोभ निवृति के लौटता ही नहीं। इसलिये ऐसे शत्रु राजा से उपहार के अतिरिक्त अन्य संधि की ही नहीं जा सकती। इस संदर्भ में सोमदेवसूरि की मान्यता है कि – यदि कोई राजा अपने शत्रु राजा से कमजोर है और यह समझता है कि संधि कर लेने पर शत्रु संधि के प्रणों का उल्लंघन नहीं करेगा। ऐसी परिस्थिति में उसे संधि के गुण का आश्रय लेना उचित है। इस प्रकार सोमदेव ने कौटिल्य आदि द्वारा की गई संधि की परिस्थितियों में वृद्धि की है। उन्होंने इतना प्रतिबंध और लगाया है कि यदि दुर्बल राजा यह समझता है कि उसका शत्रु संधि की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करेगा तभी संधि करना उचित होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनु द्वारा निर्दिष्ट संधि एवं उसकी परिस्थितियों का अनुमोदन थोड़ी बहुत अपनी सूझ–बूझ के साथ बढ़ाकर अन्य राजनैतिक विचारकों ने भी किया है।

2. विग्रह –

युद्ध आदि द्वारा विरोध करने की प्रक्रिया को विग्रह कहते हैं। मनु ने षाड्गुण्यमंत्र का एक गुण विग्रह भी माना है। उन्होंने की परिभाषा नहीं की है। अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने विग्रह की परिभाषा इस प्रकार की है– परस्पर एक दूसरे के अपकार में संलग्न हो जाना विग्रह कहलाता है। शुक्र के मतानुसार जिस क्रिया के द्वारा पीड़ित किया गया शत्रु अपने अधीन हो जाता है, उस क्रिया को विग्रह कहते हैं। अतः यह कहना उपयुक्त है कि संधि विच्छेद को विग्रह कहते हैं। जब युद्ध आदि नीतियों द्वारा शत्रु पक्ष को हानि पहुँचाई जाय तो उसे विग्रह की संज्ञा प्रदान की जाती है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत पर आक्रमण करना, अन्य कई देशों के द्वारा एक दूसरे पर आक्रमण करना आदि...। मनु विग्रह के दो भेद किये हैं –

1. स्वहित विग्रह –

समय व असमय पर शत्रु को आपत्ति में पड़े हुये देखकर स्वयं तो आक्रमण किया जाय वह स्वहित विग्रह माना जाता है।

2. मित्रहित विग्रह –

जब मित्र को किसी दूसरे राजा के द्वारा हानि पहुँचाई जा रही हो, उस समय मित्र नरेश की सहायता व रक्षा के लिये किया गया कार्य मित्रहित विग्रह कहा जाता है।

परिस्थितियाँ –

विग्रह काल का उल्लेख करते हुये मनु ने कहा है कि तब राजा अपनी सेना आदि को हृष्ट–पुष्ट तथा शत्रु सेना को कमजोर समझे तो उससे विग्रह अर्थात उस पर चढाई कर दे। कौटिल्य ने विग्रह की परिस्थितियों का वर्णन इस प्रकार किया है – यदि राजा अपने को शत्रु से बलवान समझे तो विग्रह को अपनाना चाहिये। यदि विजयाकांक्षी राजा यह देखे कि उसके राज्य में प्रायः लोग शस्त्र चलाने में समथ्र और संगठित हैं तथा नदी, पर्वत, वन और दुर्गों से उसका राज्य सम्पन्न है, उसमें प्रवेश का केवल एक ही मार्ग ह, वह शत्रु के आक्रमण का उत्तर देने में समर्थ हैं, वह अपने राज्य के सीमा के दृढ़ दुर्ग में स्थित होकर शत्रु के कार्यो का नाश कर सकता है, व्यसन और कष्टों से शत्रु का सारा उत्साह नष्ट हो रहा है, इस समय उसको वश में किया जा सकता है, यदि युद्ध छिड़ गया तो वह शत्रु के देश का कुछ भाग दबा सकेगा, ऐसे परिस्थितियों में उस राजा को विग्रह का आश्रय लेना चाहिये। इस प्रकार स्पष्ट है कि कौटिल्य ने मनु के संकेत का ही विस्तृत विवेचन किया है। एतदर्थ शुक्र की यह मान्यता है कि जिस शत्रु राजा की सेना और मित्र निर्बल पड़ चुके हों, वह किसी दुर्ग में बन्द होकर बैठा हो, दो शत्रुओं से घिरा हो अथवा भोग विलास में अत्यन्त व्यस्त हो, जो प्रजा के द्रव्य का अपहरण कर रहा हो, जिसके मंत्रियों और सेना में भेद हो, ऐसे शत्रु पर आक्रमण कर उसको वश में कर लेना चाहिये। इस कार्य को ही विग्रह की परिस्थिति के विषय में शुक्र भी मनु का समर्थन होता है। सोमदेव जी का कथन है यदि राजा यह समझे कि वह शत्रु की अपेक्षा अधिक बलिष्ठ है, और उसकी सेना में किसी प्रकार का क्षोभ नहीं है, ऐसे परिस्थितियों में उसे विग्रह गुण का आश्रय लेना उचित है।

3. यान –

यान का तात्पर्य शत्रु पर आक्रमण करना है। मनु ने यान गुण की परिभाषा देने की प्रयास नहीं किया है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे – पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत पर आक्रमण करना आदि.... । किन्तु इसके दो भेद बताये हैं।

1. एकांकिन यान –

इसके अन्तर्गत विजयाकांक्षी राजा अकेले ही (बिना किसी मित्र की सहायता लिये हुये) कार्यवश शत्रु पर आक्रमण कर देता है।

2. मित्र संहतयान –

यह यान का दूसरा प्रकार है, इसमें राजा स्वयं समर्थ न होने पर मित्र के साथ शत्रु पर आक्रमण करता है। कौटिल्य यान की व्याख्या करते हुये यह व्यवस्था देते हैं – किसी राजा पर आक्रमण करने का नाम यान है। शत्रु के कार्य का नाश यान के द्वारा ही सम्भव है। जब राजा अपने रक्षा का पूर्ण प्रबन्ध कर ले, तब ऐसी परिस्थिति में उसे यान का आश्रय लेना चाहिए। शुक्र के मतानुसार अपने इच्छित फल, विज–प्राप्ति की कामना से, शत्रु के नाश के निमित जो प्रस्थान (गमन) किया जाता है, उसे यान कहते हैं। शुक्र ने इसके पाँच भेद किये हैं – विग्रहयान, संधाययान, सम्भूययान, प्रसंगयान और उपेक्षायान। कामन्दक ने भी इन भेदों को मान्यता प्रदान की है।

4.आसन –

आसन का शाब्दिक अर्थ होता है बैठना। राजशास्त्र में इसे इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं – अपने अवसर की ताक में मौन बैठे रहना आसन कहलाता है। मनु ने इस विषय में कहा है – जब राजा अपनी सेना, वाहन एवं अमात्य आदि शक्तियों से अपने को अत्यन्त क्षीण (दुर्बल) समझे तब यत्नपूर्वक धीरे–धीरे शत्रु को शान्त करता हुआ आसन गुण को ग्रहण करे। कामन्दक ने आसन गुण की परिभाषा करते हुये अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है – युद्ध के कारण जब शत्रु और विजयाभिलाषी दोनों की सामर्थ्य परस्पर नष्ट होती हो तो उसको नष्ट न करके मौन बैठे रहना आसन कहलाता है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे – पाकिस्तान के द्वारा भारत पर अचानक आक्रमण करना एवं अन्य कई देशों के द्वारा एक दूसरे पर अचानक आक्रमण करना आदि.... । धर्मशास्त्रिकारों ने आसन के दो भेद बतलाये हैं –

1.शक्तिहीन आसन –

यह वह आसन है जिसमें राजा अपने पूर्व कर्म के कारण क्षीण होकर पुनः शक्ति संचय के लिये चुपचाप बैठ जाता है।

2.मित्रानुरोध आसन –

इसमें मित्र के अनुरोध पर राजा मौन बैठ जाता है।

परिस्थितियाँ –

मनु के अनुसार अपनी दुर्बलता आसन गुण अपनाने के लिये उपर्युक्त समय है। कौटिल्य ने किसी समय या परिस्थिति की प्रतीक्षा में मौन बैठे रहने को आसन कहा है। यदि राजा के विचार में यह बात आये कि शत्रु इतना समर्थ नहीं है कि वह मेरे कार्यों में हानि पहुँचा सके और न मैं ही इतना समर्थ रखता हूँ कि मैं शत्रु के कार्यों को हानि पहुँचा सकता हूँ, यद्यपि शत्रु राजा पर व्यसन हे परन्तु कलह में कुत्ता और शूकर के कलह के भाँति कोई फल नहीं निकलेगा, यदि मैं अपना कार्य करता रहा तो वृद्धि को सतत प्राप्त कर लूँगा। ऐसी परिस्थितियों में राजा को चुपचाप बैठकर आसन का अवलम्बन करना चाहिये, ऐसा कौटिल्य का मत है। शुक्र के अनुसार जिस स्थान (समय) पर बैठने से अपनी रक्षा और शत्रु का नाश सम्भव हो, उस स्थान पर बैठने (मौन होने) को आसन कहते हैं। इसी प्रकार सोमदेवसूरि ने आसन गुण की परिभाषा में लिखा है कि किसी समय या परिस्थिति की प्रतिक्षा में चुपचाप बैठे रहने को आसन कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि इन विचारकों ने भी मनु के मत का पोषण किया है।

5. संश्रय –

इसका शाब्दिक अर्थ होता है आश्रय ग्रहण करना। मनु ने इसे संश्रय गुण के नाम से सम्बोधित किया है। इसकी परिस्थिति की परिभाषा में मनु का कथन है – जब राजा शत्रु द्वारा अपने को पराजित होने योग्य समझे तब शीघ्र ही बलवान राजा का संश्रय (आश्रय) ग्रहण करे। यहाँ बलवान से तात्पर्य है जो उसकी रक्षा कर सके तथा शत्रु की सेना निग्रह कर सके। मनु ने संश्रय गुण के दो प्रकार बतायें हैं – शत्रु से पीड़ित होते हुए आत्म रक्षार्थ किस बलवान राजा का आश्रय लेना प्रथम प्रकार का संश्रय कहा जाता है और भविष्य में शत्रु से पीड़ित होने की आशंकावश अपनी रक्षा के लिये किसी बलवान राजा का आश्रय लेना द्वितीय प्रकार का संश्रय कहलाता है। उपर्युक्त मनु 7/174 की भाँति कौटिल्य ने भी आश्रय को संश्रय नाम से सम्बोधित किया है। इस गुण की व्याख्या में वह कहते हैं कि अपने आपको शत्रु अथवा बलवान राजा को समर्पण कर देना संश्रय कहलाता है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे – आतांकवादियों को पकड़े जाने पर शत्रु राष्ट्र के संश्रय में आना आदि।

परिस्थितियाँ –

मनु की भांति संश्रय की परिस्थिति का उल्लेख करते हुये कौटिल्य का कथन है कि जब राजा यह समझ ले कि मैं शत्रु के कार्यों में हानि नहीं पहुँचा सकता और न अपने कार्यों की ही रक्षा करने में समर्थ हूँ, तो ऐसी स्थिति में बलवान का आश्रय लेना चाहिए। शुक्रनीति में संश्रय गुण को आश्रय गुण कहा गया है। इस सन्दर्भ में शुक्र का मत है कि जिन मित्रों से सुरक्षित होकर दुर्बल राजा भी बलवान हो जाये ऐसे बलवान राजा का अवलम्बन लेना आश्रय कहा जाता है। जब प्रबल शत्रु द्वारा किसी राजा के राज्य को मूलोच्छेद कर दिया गया हो और राजा को कोई दूसरा उपाय न सूझे तो इस परिस्थिति में उस राजा को किसी कुलीन आर्य, सत्यवादी और बलवान राजा का आश्रय ग्रहण करना चाहिये। जिन्हें अपनी भूमि का कुछ भाग दिय गया हो, उसके आश्रय में चले जाने को आश्रय कहते हैं। सोमदेवसूरि ने संश्रय की परिभाषा व परिस्थिति के उल्लेख में कौटिल्य के शब्दों का सहारा लिया है और सशक्त राजा के आश्रय का समर्थन करते हुये लिखा हे कि सशक्त से भयभीत होकर अशक्त राजा का आश्रय लेना उसी प्रकार व्यर्थ हैं, जिस प्रकार हाथी से भयभीत होकर एरण्ड द्रुम पर चढ़ जाना या आश्रय लेना व्यर्थ होता है। इन विचारों से भी मनु के विचारों की ही पुष्टि होती है।

6. द्वैधी भाव –

किसी से संधि ओर किसी से विग्रह एक साथ करने की क्रिया को द्वैधीभाव कहते हैं। द्वैधीभाव गुण के समय और परिस्थिति को उल्लेख

मानवधर्मशास्त्र में इस प्रकार मिलता है – जब राजा शत्रु को अति बलवान पाये तो ऐसी परिस्थिति में उसे अपनी सेना को दो भागों में विभक्त कर अपना कार्य सिद्ध करना चाहिये। अर्थात वह एक स्थान पर युद्ध करे और दूसरे स्थान पर शान्त रहे। यहाँ सेना को द्विभाग करने को द्वैवीभाव कहा गया है। याज्ञवल्क्य ने भी पअने सेना को दो भागों में बांटने को द्वैधीभाव माना है। इसके तर्कसंगत स्पष्ट विवेचन के लिये कौटिल्य की युक्ति का सहारा लेना उचित है। कौटिल्य का कथन है कि एक राजा से संधि कना और दूसरे से विग्रह करना द्वैधीभाव गुण है। एक के साथ संधि और दूसरे के साथ विग्रह करने से मैं अपने कार्य को पूरा कर सकूँगा और शत्रु के कार्यो को नष्ट कर सकूंगा – जब राजा ऐसा पूर्ण रूप से समझ ले तो उसे द्वैधीभाव का अवलम्बन करके अपनी वृद्धि करनी चाहिये। कौटिल्य का यह निर्देष है। सोमदेवसूरि ने भी कौटिल्य के मत का प्रतिपादन किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यहाँ मनु, याज्ञवल्क्य एवं शुक्र के विचार एकमत हैं और कौटिल्य तथा सोमदेवसूरि के एक जैसे हैं। कौटिल्य के इस विचार में विशेष स्पष्टता एवं वैज्ञानिकता दृष्टिगत हो रही हैं। किन्तु परम्परागत मौलिकता तो मनु की ही है। इस प्रकार अन्तर्राज्यीन सम्बन्ध एवं पर–राष्ट्रनीति के संचालन में मनु ने जिस षाड्गुण्यमंत्र का प्रयोग परम आवश्यक माना है, उसकी उपयोगिता को कौटिल्य आदि विचारकों ने एकमत से स्वीकार किया है। जिसका उल्लेख पी.वी. काणे एवं यू.एम. के ग्रन्थों में पाया जाता है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे – पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत के साथ एक तरफ संधि, वार्ता करना और दूसरे तरफ पर विग्रह, आक्रमण करना आदि। अतः पर–राष्ट्र सम्बन्ध संचालन में इन मंत्रों की उपयोगिता निर्विवाद है।

निष्कर्ष –

इस प्रकार हम देखते हैं कि कौटिल्य द्वारा बताई गयी उपर्युक्त नीतियों का प्रमुख उद्देश्य शत्रु को पराजित करना ओर अपनी शक्ति में बढ़ोतरी करना है, वह कहता है कि काल और परिस्थितियों के अनुकूल जो नीति राज्य के भलाई में योगदान करें, वह नीति उस समय श्रेयकर होती है, इस प्रकार तो राजा उपर्युक्त छः नीतियों का ठीक–ठाक समयानुसार प्रयोग करता है, वही अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर पाता है। इस प्रकार वैदेशिक नीति के सफल संचालन के लिये कौटिल्य छः नीतियों के अलावा चार उपायों का भी वर्णन करता है, ये उपाय हैं – साम, दाम, दण्ड और भेद इन उपायों का मुख्य उद्देश्य शत्रु को अपने वश में करना है। जो ऐसा प्रतीत होता है मानों आज भी प्राचीन परराज्य सम्बन्ध का निरूपण किया जा रहा है। वर्तमान समय में भी अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में यह देखा जा रहा है कि एक तरफ संधि, वार्ता होती है और दूसरी ओर सैनिकों का सर काट दिया जाता है, सीमा रेखा को पार किया जाता है, आतंकवादियों द्वारा हमला किया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो प्राचीन परराज्य सम्बन्धों में षाड्गुण्यमंत्र के छः गुणों संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय का निरूपण किया जा रहा है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में सुधार लाने के लिये प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों के षाड्गुण्यमंत्र के छः गुणों संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय का अनुकरण देश के लिये ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिये अनुकरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1.षाड्गुण्यमेवैतदवस्थाभेदादिति कौटिल्यः। अर्थ., 7/1, वार्ता 5
2.संधि चविग्रहं यानमासनमेव च।
द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांष्चियेत्सदा।। मनु., 7/160
3.षाड्गुण्यमिति यत्प्रेक्तं तन्निबोध युधिष्ठिर।
सन्धानासनमित्येव यात्रासन्धामेव च।। शांतिपर्व, 69!67
4.संधि विग्रहासनयान संश्रय द्वैधीभावाः षाड्गुण्यमित्याचार्या।। अर्थ., 7!1, वार्ता 2
5.द्वैगुएयमिति वातव्याधिः।। अर्थ., 7/1, वार्ता 3
6.सन्धिविग्रहाभ्यां हि षाड्गुण्यं संपद्यंतेति।। अर्थ., 7/1, वार्ता 4
7.षाड्गुण्यमेवैतदवस्थाभेदादिति कौटिल्यः। अर्थ., 7/1, वार्ता 5
8.शुक्र0, 4/1065
9.मनु0, 7/161
10.तत्र प्रणवंधः संधिः।। अर्थ., 7/1, वार्ता 6
11.कुल्लूकभट्ट, मनु., 7/163
12.उपायान्तर नाषे तु ततो विग्रहमाचरेत। शुक्र0, 4/1085
13.शुक्र0, 4/1071
14.शुक्र0, 4/1079
15.वलीयासभियुकतस्तु नृपो•नन्य प्रतिक्रियः।
16.नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 50
17.अपकारों विग्रहः।। अर्थ., 7/1, वार्ता 7
18.विकर्षितः सन्नाधीनो भवेच्छत्रुस्तु मेनवै।। शुक्र0, 4/1067
19.कुल्लूकभट्ट, मनु., 7/164
20.मनु0, 7/171
21.अभ्युच्चीय मानोति गृहणीयात्।। अर्थ., 7/1, वार्ता 13
22.अर्थ., 7/1, वार्ता 48–52
23.ह्यन्यश्च कलहः स्मृतः।। शुक्र., 4/1083
24.नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 51
25.मनु0, 7/165
26.अभ्युच्चयो यानम्।। अर्थ., 7/1, वार्ता 9
27.कामन्दकीय0, 11/2
28.मनु0, 7/172
29.कामन्दकीय0, 11/12–13
30.मनु0, 7/176

31.उपेक्षाणामासनम्।। अर्थ., 7/1, वार्ता 8
32.स्वरक्षणं शत्रु नाषोभवेत्स्थानात्तदासनम्।। शुक्र., 4/1069
33.नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 46
34.अर्थसम्पादनार्थ च पीड्यमानस्य शत्रुभिः।
साधुशु व्यपदेशार्थ द्विविधः संश्रयः स्मृतः।। मनु., 7/168
35.परार्पणं संश्रयः।। अर्थ., 7/1, वार्ता 10
36.अर्थ., 7/1, वार्ता 60–61
37.यैर्गुप्तो बलवान्भूपाददुर्बलो•पि सआश्रयः।। शुक्र., 4/1069
38.नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 56
39.द्वैधीभावः स्ववलस्य द्विधाकरणम्। मिताक्षरा, याज्ञ0, 1/346
40.संधि विग्रहोपदानं द्वैधीभाव।। अर्थ., 7/1, वार्ता 11
41.हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पार्ट 2, पेज 693, ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन पोलिटिकल आइडियाज, पेज 181

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- Google Scholar
- EBSCO
- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Indian Streams Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.org